# PHILOSOPHY

## Hons., Paper-I (Part I)

## Evolution (Samkhya)

## सांख्य का विकासवाद

Dr. S. K. Singh
Mob.-9431449951

→ प्रकृति से जगत का विकास मानने के कारण सांख्य दर्शन के जगत संबंधी सिद्धान्त को विकासवाद का सिद्धान्त कहा जाता है।

→ सांख्य दर्शन निरीश्वरवादी होने के कारण ईश्वरवाद को स्वीकार न कर विकासवाद को स्वीकार करता है। यह प्रकृति रूपी मूल उपादान कारण के आधार पर अपनी सत्कार्यवादी अवधारणा के अनुरूप जगत के विकास की व्याख्या करता है।

→ जब पुरुष का प्रकृति से सान्निध्य होता है तो इसके परिणाम स्वरूप प्रकृति के गुणों की साम्यावस्था में विकार उत्पन्न हो जाता है। इस गुण-क्षोभ के कारण विरूप परिणाम की स्थिति में प्रत्येक गुण दूसरे गुणों पर आधिपत्य जमाना चाहता है और न्यूनाधिक अनुपातों में उनके संयोगों के फलस्वरूप नाना प्रकार के सांसारिक विषय उत्पन्न होते हैं।

→ सांख्य मतानुसार प्रकृति से जगत का विकास यांत्रिक न होकर प्रयोजनपूर्ण है। सांख्य के मतानुसार प्रकृति दर्शनार्थ (ज्ञात होने के लिये) पुरुष की अपेक्षा रखती है और पुरुष कैवल्यार्थ (कैवल्य की प्राप्ति के लिये) प्रकृति की सहायता लेता है। सर्ग या विकास पुरुष के भोग एवं अपवर्ग रूपी प्रयोजन की सिद्धि के लिये होता है।

→ भोग के लिये पुरुष को प्रकृति से आविर्भावित जगत की आवश्यकता होती है, किन्तु मोक्ष (अपवर्ग) के लिये भी पुरुष को प्रकृति की अपेक्षा होती है क्योंकि सांख्य मतानुसार मोक्ष हेतु पुरुष का प्रकृति से भेद का ज्ञान या विवेक ज्ञान आवश्यक है। जब पुरुष अपना और प्रकृति के भेद को सम्यक् अपने यथार्थ स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करता है तो फिर मोक्ष (अपवर्ग) की प्राप्ति हो जाती है।

→ चूँकि प्रकृति अचेतन है और अचेतन होते हुये वह पुरुष के भोग एवं अपवर्ग रूपी प्रयोजन की सिद्धि के लिये कार्यरत है। अतः

Scanned with CamScanner

अचेतनता एवं प्रयोजनात्मकता को मानने में कोई विरोधाभास नहीं है क्योंकि सांख्य जिस प्रकार बछड़े की उपस्थिति मात्र से गाय के शरीर के भीतर दुग्ध-प्रवाह की प्रक्रिया का उत्पन्न होना अचेतन है किन्तु उसका प्रयोजन बछड़े की क्षुधा-पूर्ति करना है उसी प्रकार अचेतन प्रकृति भी पुरुष के प्रयोजन सिद्धि हेतु प्रवृत्त होती है।

प्रकृति से होनेवाले विकास-क्रम की निम्नलिखित तालिका है-

पुरुष ⟷ प्रकृति (सत्व-रज-तम की साम्यावस्था)
↓
महत या बुद्धि (The Great or Intellect)
↓
अहंकार (Ego)
↓
- सात्विक अहंकार
  - पंचज्ञानेन्द्रिय (चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, रस एवं त्वक् - इन्द्रिय)
  - पंच कर्मेन्द्रिय (मुख, हस्त, पाद, पायु एवं उपस्थ)
  - मनस (आन्तरिक इन्द्रिय)
- राजसिक अहंकार
- तामसिक अहंकार
  - पंचतन्मात्राएँ (शब्द, स्पर्श, रूप, रस एवं गंध)
    ↓
    पंचमहाभूत (स्थूल तत्व) (आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी)

→ यहाँ विकास का आरम्भ प्रकृति से होता है और अन्त पंचमहाभूतों में होता है। इस प्रकार सांख्य विकासवाद सूक्ष्म से आरम्भ होकर स्थूल की ओर बढ़ता है। यह विकास एक सरलवत न होकर चक्रीय होता है। जगत का आविर्भाव प्रकृति से होता है तथा कालान्तर में वे जागतिक वस्तुएँ प्रकृति में ही तिरोहित हो जाती हैं।

→ सांख्य का विकासवाद डार्विन के विकासवाद से भिन्न है। सांख्य का विकासवाद विश्व के विकास की व्याख्या करता है जबकि डार्विन का विकासवाद जैविकीय विकास की व्याख्या। सांख्य का विकास प्रयोजनमूलक है जबकि डार्विन का विकास यांत्रिक। सांख्य में पुरुष व प्रकृति के सामीप्य से विकास की प्रक्रिया प्रारंभ होती है जबकि डार्विन के अनुसार पुद्गल (जड़) पदार्थ के सक्रिय होने पर विकास प्रारंभ होता है। सांख्य के अनुसार कर्म विकास का प्रेरक है जबकि डार्विन के अनुसार अस्तित्व के लिये संघर्ष